श्री ज्ञान वल्लभ पुष्पमाला का

प्रथम-पुष्प

श्रीमद् देवेन्द्रसूरिजी महाराजकृत

श्री चैत्य वंदन भाष्य

का

हिन्दी अनुवाद

कर्ता

श्री प्रतापमलजी सेठिया मन्दसौर

प्रकाशक

जैन-सेवा-संघ मन्दसौर (मध्यभारत)

वीर सं २४८१ विक्रम सं २०१२

मूल्य—सदवाचन

समर्पण ।

परम त्याग भूषण-भूषिता, आबाल ब्रह्मचारिणी परमविदुषी पूज्या श्रीमती प्रवर्तिनीजी श्री वल्लभ श्रीजी महाराज साहबा के

पुनित करकमलों में

ज्ञाननिधे भवतारि के पूज्ये ।

आपने बाल्यावस्था म ही ससार को एक उपाधी समझकर परम वैराग्य के साथ चारित्र ग्रहण कर एवं ज्ञानोपार्जन कर जैन शासन की अमूल्य सेवा की है और स्वयं न अपनी आत्मा में धीरता वीरता गंभीरता, सहिष्णुता, नम्रतादि गुणों को प्राप्त कर अपनी सुधामय वाणी स वीतराग के धर्म पथ को बतलाकर कई जीवों को आत्मोन्नती की है ।

मेरे पर भी आपने कृपा कर के जैन धर्म व तत्वादि बतलाने की उदारता की है । इन उपकारों एवं आप के गुणों से आकृषित होकर यह लघु ग्रंथ आप के कर कमलों में समर्पित करता हू ।

पाद पद्म मधुकर भवदीय
प्रतापमल सेठिया
मन्दसौर (म.भारत)

आबाल ब्रह्मचारिणी परम विदुषी पूज्या
श्रीमती प्रवर्तिनीजी श्रीवल्लभश्रीजी महाराज

। नम्र निवेदन ।

वन्दन हो प्रभु वीर को, गौतमादि गुरुराय ।
बुद्धि दो मा सरस्वती, ध्यान धरूं सुखदाय ॥ १ ॥
करता हिन्दी अनुवाद, प्रथम भाष्य को सार ।
सुगुरु कृपा से हो मुझे, सुबुद्धि अपरपार ॥ २ ॥

सज्जनो,

भव्य प्राणी विधि विधान के साथ क्रिया कर के अपनी आत्मा का कल्याण करे, इस हेतु से महान उपकारी पूज्य श्रीमद् देवेन्द्र सूरिजी महाराज ने भव्य प्राणीओं की दैनिक क्रिया-चैत्यवंदन, गुरुवंदन, और प्रत्याख्यान के लिये चैत्यवंदन भाष्य, गुरुवंदन भाष्य और प्रत्याख्यान भाष्य की रचना करी । इन भाष्यों का गुजराती अनुवाद तो छप चुका, परन्तु हिन्दी अनुवाद नहीं होने से हिन्दी भाषा के जानकार को इसका लाभ नहीं मिलता था और इस की पूर्ण आवश्यकता थी ।

संयोगवशात् खरतरगच्छीय त्यागमूर्ति **पूज्यश्रीमद्सुखसागरजी महाराज** साहब के समुदायवर्तिनी पूज्या **श्रीमतीशीनश्रीजी** महाराज साहबा के शिष्या **श्रीमती ज्ञानश्रीजी** महाराज साहबा की समुदायवर्तिनी वर्तमान **आचार्यदेवश्री श्री वीरपुत्र श्रीजी आनन्दसागरसूरीश्वरजी** महाराज साहब की आज्ञानुयायिनी साध्वीजी महाराज **श्रीवल्लभश्रीजी** आदि का चतुर्मास सं० २०१० में छोटी सादड़ी (राजस्थान) में हुआ । उस चतुर्मास में प्रवर्तिनीजी महाराज साहबा श्री देवश्रीजी का वत्न के पश्चात बहुत ही थोड़े दिनों में प्रवर्तिनीजी महाराज साहबा श्री प्रेमश्रीजी का स्वर्गवास हो गया, इससे संघ को बड़ा आघात हुआ, पर जो भावि भाव होता है वो ही होता है । इन के स्वर्गवास होने पर वर्तमान आचार्यदेव ने बाल ब्रह्मचारिणी श्रीमती वल्लभश्रीजी महाराज साहबा को प्रवर्तिनी पद के लिये योग्यतया जानकर सादड़ी के संघ को आप श्री को प्रवर्तिनी पद देने की आज्ञा के साथ आश्विन शुक्ल १५ का

मदुरा भी परमाया मदनमार साहबा संघ के यहाँ के अग्रेवान श्रेष्ठीवर्य आयदनमलजी साहब नागोरी ने संघ समक्ष उन आचार्य पालन कर श्रीमतीको प्रवर्तिना पद समर्पण किया। उसी समय संघ की इच्छा हुई की इस की यादगार में ज्ञानवृद्धि लिये कोई पुस्तक प्रकाशित की जाय जिस से ज्ञान प्राप्ति का लाभ संघ को मिले। बहुत विचार के पश्चात् दैनिक क्रिया का मुख्य अंग प्रभुवंदन निर्धारित हो उस लिये चैत्यवंदन भाष्य का हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता पर दृष्टी गई और उसे प्रकाशित करने का निश्चय किया गया। उसके फलस्वरूप यह हिन्दी अनुवाद आप के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष होता है।

परम पूज्य प्रवर्तिनीजी महाराज साहबा श्री......श्रीजी की शिष्या थी, जिनश्रीजी महाराज व श्री......श्रीजी महाराज ने इसका हिन्दी अनुवाद करने और इस पर दो शब्द लिखने की मुझे आज्ञा प्रदान की, अच्छा होता अगर किसी विद्वान को यह कार्य के लिये आज्ञा दी जाती। मेरे जैसा अल्पज्ञ इस कैसे सम्पूर्ण कर सकता फिर भी गुरु आज्ञा को शिरोधार्य कर यह प्रयास किया है।

मेरा तो यह दृढ निश्चय है कि भले क्रिया थोड़ी हो, पर जो भी हो वह आगम विधी से हो। मेरा ४० वर्ष का स्वयं का अनुभव है कि जिस क्रिया का कारण हेतु शब्दार्थ, गूढार्थादि समझकर क्रिया की जाती है उसमें मन की एकाग्रता होकर जो आनन्द प्राप्त होता है वह अवर्णनीय है। वर्तमान में जो क्रिया प्राय दृष्टिगोचर होती है उनमें मन की एकाग्रता का अभाव होता है जिससे कोई आनंद भी प्राप्त नहीं होता और न इच्छित फल ही प्राप्त होता है। सिर्फ रूढी का पालन होता है। चैत्य वंदन के वास्ते तो श्रीमहानिसीथ सूत्र के सातवें अध्याय में लिखा है---

अविहिए चेइआई वंदिज्जा, तस्सण पायच्छितं उवइ सिज्जाजओ
अविहिए चेइआई वंदयाणो अन्नेसिं असद्धं जणेइ इइ काउणं।

अर्थात् अविधि से चैत्य की वंदना करने से दूसरे भव्य जीवों को अश्रद्धा उत्पन्न होती है इसलिये अविधी से चैत्यवंदन करने वालों को प्रायश्चित देना चाहिए

महान योगी अवधूत श्रीमद् आनंदघनजी महाराज ने भी श्रीअनंतनाथजी महाराज के स्तवन में फरमाया है कि--

देवगुरु धर्मनि शुद्धा कहो किम रहे,
किम रहे शुद्ध श्रद्धा न आणो ।
शुद्ध श्रद्धा न विण सर्व किया कही
छार पर लींपणो तेह जाणो ॥

अर्थात ज्ञान और श्रद्धा के बिना क्रिया छार पर लिपन के समान है । श्रीमद् देवचन्द्रजी महाराज ने धर्मनाथजी के स्तवन में फरमाया है कि--

पूजा चार प्रभु वंदना रे जो आगम रीते थाय ।
कारण सत्ये कार्यनीरे, सिद्धि प्रतीत कराय ॥

यानि एक बार भी प्रभु वंदना शास्त्रानुसार हो तो कार्य की सिद्धि हो जाती है और भी कहा गया है कि " ज्ञानी श्वासोश्वास में करे कर्मनो छेद पूर्व क्रोड़ वर्षों लगे अज्ञानी करे त " और " ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्ष " आदि २ अनेक जगह यही बतलाया है कि क्रिया ज्ञानपूर्वक समझपूर्वक, विधी विधान शास्त्राज्ञानुसार होवेगी इच्छितफल (मोक्ष) की देनेवाली है ।

वर्तमान समय में जबकि तीर्थंकर व केवली का अभाव है, ऐसे समय में जन समाज को प्रभु प्रतिमा और गणधरोंवर्णित जैन आगमों का ही आधार है परन्तु यथार्थ आगम का ज्ञान दिन २ कम होता जा रहा है, इतना ही नहीं परंतु जैनागमों का ज्ञान करानेवाले हमारे साधुवर्ग का भी संयोग स्थान २ पर हर समय बहुत कम मिलता है । ऐसी अवस्था में शास्त्रानुसार विधिपूर्वक धार्मिक क्रिया हो और जैनागमों का ज्ञान प्राप्त हो इसके लिये, पूर्वाचार्यों द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों का हिन्दी में सरल भाषा में अनुवाद प्रकाशित होना आवश्यक है ।

इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद भी इसी उद्देश्य से लेकर किया गया है जिससे हिन्दी भाषा जानने वाले प्रभु वंदन की यथार्थ विधी जाने समझे और तदनुसार वंदन कर आत्म कल्याण करें ।

पूज्य प्रवर्तिनीजी म सा की विदुषी शिष्या शान्तमूर्ति श्री जीतश्रीजी म सा से ज्ञान की भक्ति का स्वरूप सुनकर उससे प्रभावित होकर श्रीमान् शेठ माणेकलालजी मेघराजजी बुरडीया फलौधी (मारवाड़) वाले जिनका व्यापार स्थान तलोदा (खानदेश) भी है इस पुस्तक का सम्पूर्ण व्यय देकर जो ज्ञान भक्ति प्रदर्शित की है अतएव वो धन्यवाद के पात्र है।

समय का अभाव और अल्पज्ञता के कारण इसका हिन्दी अनुवाद करना मेरे लिए असंभव था, पर प्रवर्तिनीजी म सा की विदुषी शिष्या श्रीमती कुशलश्रीजी म (जो भविष्य में बहुत विद्वता प्राप्त कर जैन समाज की बहुत सेवा करेंगी ऐसी आशा है) का प्रताप है कि मैं इसे पूर्ण कर सका अतएव मैं उनका आभारी हूँ।

प्रवर्तिनी पद की प्रथम वर्ष ग्रन्थी आषाढ़ शुक्ल १५ थी अतएव उसी दिन यह प्रकाशित करने की पूर्ण अभिलाषा थी परन्तु प्रेस वालों के विश्वास पर रहनेसे अभिलाषा पूर्ण नहीं हुई उसका खेद है। इसमें मेरी अल्पज्ञता के कारण व प्रेस की गलती के कारण जो कुछ त्रुटी व अशुद्धि रही हो उसके लिये क्षमा प्रार्थी हूँ।

वी सं ०१ चैत्र शुक्ल १८
गुरुवार ता ७ अप्रैल १९५८

सबका नम्र सेवक —
प्रतापमल सेठिया
मंदसौर (मध्यभारत)

श्री चैत्यवंदन भाष्य

हिन्दी अनुवाद

मंगलाचरण-मूल गाथा

वंदित्तु वंदणिज्जे, सव्वे चिइवंदणाइ सुवियारं
बहु-वित्ति-भासचुण्णी सुयाणुसारेण वुच्छामि ॥१॥

शब्दार्थ

वंदित्तु – नमस्कार करके	चिइवंदणाइ – चैत्यवंदन आदि के	भास – भाष्य
वंदणिज्जे – वंदन करने योग्य	सुवियार–शुद्ध विचार को	चुण्णी – चूर्णी
सव्वे सब (पंचपरमेष्टि को)	बहु–वित्ति–अनेक प्रकार की टीका	सुयअणुसारेण – श्रुत (शास्त्रानुसार)
		वुच्छामि–मैं (देवेन्द्रसूरि) वर्णन करूंगा।

भावार्थ

वंदन करने योग्य जो पंचपरमेष्टि हैं उनको नमस्कार करके, चैत्यवंदनादि के जो शुद्धविचार (शुद्धाचार), जिन विचारों को बहुत से भाष्य टीका चूर्णी रूप शास्त्रों में वर्णन किया है। उसके अनुसार मैं (देवेन्द्रसूरि) यहां वर्णन करूंगा ॥ १ ॥

चैत्यवंदन भाष्य के २४ द्वार

दहतिग अहिगम-पणगदुदिसि तिहुग्गाह तिहा उवंदणया।
पणिवाय-नमुक्कारा वन्ना सोल-सय सीयाला ॥२॥

इगसीइसयंतु पया, सगनउइ संपयाओ पण दंडा ।
बार अहिगार चउवंदणिज्ज, सरणिज्ज चउह जिणा ॥३॥
चउरो थुइ निमित्तट्ठ – बारह हेउय सोल आगारा ।
गुण वीस दोस उस्सग्ग – माणथुत्तं च सगवेला ॥४॥
दस आसायण-चाओ-सव्वे चिइ वंदणाइ ठाणाइं ।
चउवीस दुवारेहिं दुसहस्सा हु ति चउसयरा ॥५॥

शब्दार्थ

दहतिग – दशत्रिक
अहिगमपणगं – पांच अभिगम
दु दिसि – दो दिशा
तिहुग्गह – तीन अवग्रह
तिहाउ–पुन तीनप्रकारसे
वंदणाय–चैत्यवंदन
पणिवाय – खमासमण (जिसमें पांच अंग एकत्रित होना)
नमुक्कारा – नमस्कार
वन्ना – अक्षर
सोलसय सीयाला – एक हजार छ सो सैंतालीस
इगसीइसयंतु–फिर एकसो इक्यासी

पया – पद
सगनउइ–सित्यानवे
संपयाओ – संपदा
पणदंडा – पांच दंडक
बार अहिगार – बारह अधिकार
चउवंदणिज्ज चार वंदन करने योग्य
सरणिज्ज – स्मरण करने योग्य
चउहजिणा–चार प्रकारके जिनेश्वर
चउरोथुइ – चार स्तुति
निमित्तअट्ठ–आठ निमित्त
बारह हेउ–बार हेतु
सोलआगारा–सोला आगार

गुणवीसदोसा उन्नीस दोष
उस्सग्गमाण – कायोत्सर्ग (काउस्सग) का प्रमाण
थुत्तंच – स्तवन और
सगवेला – सात वक्त (चैत्यवंदन)
दसआसायण–दस आशातना
चाओ–त्याग
सव्वे – सर्व
चिइवंदणाइ–चैत्यवंदन के
ठाणाइ–स्थान (भेद)
चउवीस – चौबीस
दुवारेहिं – द्वार करके
दुसहस्सा–दो हजार और
हुन्ति–होता है
चउसयरा–चुमोतर

अर्थ

चैत्यवंदन के २४ द्वार और उसके उत्तर भेद २०७४ होते हैं य उपरोक्त गाथा द्वारा इस प्रकार बताये गये हैं ।

(१) १० त्रिक, (२) ५ अभिगम, (३) ३ दिशा, (४) ३ अवग्रह, (५) ३ प्रकार से चैत्यवंदन (६) पचांगखमासमण (७) नमस्कार (८) १६४७ अक्षर (९) १८१ पद (१०) ९७ संपदा (११) ५ दंडक (१२) १२ अधिकार (१३) ४ वंदन करने योग्य (१४) स्मरण करने योग्य (१५) ४ प्रकार के निक्षेपोंमें जिनेश्वर (१६) ४ स्तुति (१७) ८ निमित्त (१८) १२ हेतु (१९) १६ आगार (२०) काउस्सग्ग के १९ दोष (२१) काउस्सग्ग का प्रमाण (२२) वीतराग का स्तवन (२३) ७ वक्त चैत्यवंदन (२४) १० बडी आशातनाका त्याग, इस प्रकार २४ द्वारों से कुल उत्तरभेद २०७४ होते हैं।

चैत्यवंदनभाष्य के २४ द्वार

१	२	३	४
१० त्रिक	५ अभिगम	३ दिशा	३ अवग्रह
५ ३ प्रकार के चैत्यवंदन	६ पचांगप्रणिपात (खमासमण)	७ नमस्कार	८ १६४७ अक्षर
९ १८१ पद	१० ९७ संपदा	११ ५ दंडक	१२ १२ अधिकार
१३ ४ वंदन करने योग्य	१४ १ स्मरण करने योग्य	१५ ४ प्रकार के निक्षेपसे जिन	१६ ४ स्तुति
१७ ८ निमित्त	१८ १२ हेतु	१९ १६ आगार	२० १९ दोष काउस्सग्ग के
२१ काउस्सग्ग का प्रमाण	२२ वीतरागका स्तवन	२३ ७ समय चैत्य वदन	२४ १० बडी आशातनाका त्याग

प्रथम द्वार के १० त्रिक

तिन्नि निसीही तिन्निउ, पयाहिणा तिन्नि चेवय पणामा ।
तिविहा पूयाय तहा, अवत्थ – तिय – भावणं चेव ॥६॥
तिदिसि-निरिक्खण विरइ, पयभूमि-पमज्जणंच तिक्खुत्तो ।
वन्नाइ – तियमुद्दा – तियच तिविहंच पणिहाणं ॥७॥

तिन्निनिसीही–तीन निसीहि
तिन्निउपयाहिणा – तीन प्रदक्षिणा
तिन्नि – तीन
चेव – निश्चय
पणामा – नमस्कार
तिविहापूया – तीन प्रकार की पूजा
तहा – तथा

अवत्थतिय – तीन अवस्था का
भावणचेव–निश्चय चिंतवन करना
तिदिसि – तीन दिशामें
निरिक्खण-देखने का
विरइ – त्याग
पयभूमि – पांव रखने की भूमिका

पमज्जण – प्रमार्जन
तिक्खुत्तो – तीनवार
वन्नाइ तिय–वर्णादि त्रिक
मुद्दातिय – तीन मुद्रा
च – और
तिविह – तीन प्रकार से
पणिहाणं – प्रणिधान
(खमासमण)

अर्थ

पहिले द्वार के १० त्रिकों के नाम इस प्रकार हैं (१) नैषेधिक (२) प्रदक्षिणा (३) प्रणाम (४) पूजा (५) अवस्था (६) दिशि (७) प्रमार्जन (८) आलंबन (९) मुद्रा (१०) प्रणिधान । उपरोक्त दस त्रिकों के तीस भेद होते हैं व इस प्रकार हैं —

दस त्रिक के नाम भेद सहित

३ निसीहि	३ प्रदक्षिणा	३ प्रणाम	३ प्रकार पूजा	३ अवस्थाका चिंतवन
३ दिशामे देखनेका त्याग	३ समयें पैर रखने की भूमि का प्रमार्जन	३ आलंबन	३ मुद्रा	३ प्रणिधान

प्रथम निसीहि त्रिक

घर-जिणहर-जिणपूआ, वावारच्चायओ निसीहि तिगं ।
अग्ग-द्वारे मज्झे-तइया, चिइवन्दणा समए ॥ ८ ॥

घर-गृह
जिणहर-मंदिर (जिनालय)
जिणपूआ-जिनेश्वर भगवान की द्रव्यपूजा संबंधी
वावार-व्यापार
चायओ-त्याग करने से
निसीहि तिगं-तीन निसीहि
अग्गद्दारे-मुख्य द्वार पर
मज्झे-मंदिर के मध्यमें (सभा मंडप में)
तइया-तीसरी
चिइवंदण-चैत्यवंदन के
समए-समय

विवेचन

प्रभु के मंदिर में प्रवेश करते समय प्रथम निसीहि मंदिर के मुख्य द्वार पर कहना चाहिये, इस निसीहि को कहते हुए मनमें यह भावना करनी चाहिये कि, हे प्रभु ! मैं अब अपना गृह (घर) संबंधी तमाम सावद्य (पाप) व्यापार का मन वचन काया से त्याग करता हूं । इसी प्रकार दूसरी निसीहि मंदिर के सभामंडप में बोलनी चाहिये । इस निसीहि के बोलते समय मनमें यह भावना करनी चाहिये कि, अब मैं मंदिर संबंधी सावद्य (पाप) व्यापार का मन वचन काया से त्याग करता हूं । तीसरी निसीहि भगवान की द्रव्यपूजन के पश्चात भावपूजा अर्थात चैत्यवंदन के प्रारंभ में बोलनी चाहिये, इस निसीहि के बोलते हुए मनमें यह भावना करनी चाहिये कि अभीतक मैंने आपकी पूजा के निमित्त जो द्रव्य की छूट रखी थी उसको भी अब त्याग करके, केवल भाव पूजा के सिवाय सब प्रकार के सावद्य (पाप) व्यापार का मन वचन काया से त्याग करता हूं । यह निसीहि प्रत्येक स्थानपर तीन तीन या एक एक कहना चाहिये ।

दूसरा प्रदक्षिणा त्रिक

दूसरे त्रिक में जो तीन प्रदक्षिणा बतलाई हैं वह प्रभु के दाहिनी

तरफ से तीन वक्त देनी चाहिये। इसमें प्रथम प्रदक्षिणा ज्ञानाराधन के हेतु, दूसरी दर्शन आराधन के हेतु तीसरी चारित्र आराधन के हेतु है। अथवा संसार के भव भ्रमण के मिटने के लिये देनी चाहिये।

तीसरा प्रणामत्रिक

अंजलिबद्धो-अद्धो-णओ अ, पंचगओअ तिपणाया।
सव्वत्थवा तिवार सिराइनमणे पणाम-तियं ॥ ६ ॥

अंजलिबद्धो-हाथ जोड़कर	पंचगओ-पांचों अंगसे	तिवारं – तीन वक्त
अद्धोणओ – अर्धावनत	तिपणाया तीन प्रणाम	सिराइनमणे–मस्तक झुकाना
अ – और	सव्वत्थवा-समस्त स्थानोंपर	पणामतियं – प्रणाम त्रिक

भावार्थ

अंजलिबद्ध (हाथ जोड़कर) प्रणाम अर्धावनत (आधा शरीर झुकाकर) प्रणाम और पंचांग (मस्तक, दोनो हाथ, दोनो पैर घुटने सहित) प्रणाम इस प्रकार के तीन प्रणाम बतलाये हैं या सब स्थानों पर तीन तीन वक्त मस्तकादि झुकाना ये प्रणाम त्रिक कहलाता है।

चौथा पूजा त्रिक

अंगग्गभाव-भेया पुप्फाहार-थुइहिं पूयतिग।
पंचुवयारा अट्ठोवयार, सव्वो वयारावा ॥ १० ॥

अंग अग्ग – अंग अग्र	थुइहिं – स्तुति से	अट्ठोवयारा – आठ प्रकारी
भावभेया–भावपूजाके भेदसे	पूयतिग – पूजात्रिक	सव्वोवयारा–सर्व प्रकार की
पुप्फाहार – पुष्प,आहार	पंचुवयारा – पांचप्रकारी	वा – या

विवेचन

अगपूजा अग्रपूजा और भावपूजा ये तीन प्रकार की पूजा है। ये तीनों अनुक्रम से पुष्प आहार और स्तुति पूजानिक कहलाती हैं। या पच प्रकारी अष्टप्रकारी और सर्वप्रकारी पूजानेक होती हैं।

प्रथम प्रभुकी अगपूजा करनेवाले व्यक्ति को (१) मनशुद्धि (२) वचन शुद्धि (३) कायशुद्धि (४) वस्त्रशुद्धि (५) भूमिशुद्धि (६) पूजाके उपकरणों की शुद्धि और (७) नीति का धन इस प्रकार सात शुद्धि करना चाहिये। पश्चात एक धोती, दूसरा उत्तरासन (उत्तरासन ऐसा हो जिसके द्वारा ही अष्ट (आठ) प्रतका मुखकोश बधा जावे) इस प्रकार दो वस्त्र पूजा के समय रखना चाहिय। स्त्रियों को तीन वस्त्र व मुख कोशका रुमाल (अष्टप्रत जिससे हाव) इस तरह चार वस्त्र का उपयोग करके पूजा करना चाहिये।

प्रभु के अग पर जिन द्रव्यों से पूजा की जाती है उसे अगपूजा कहते हैं। अग पर पूजन करने के द्रव्य (१) पचामृत (दूध दही, घी, शक्कर जल) ( ) चन्दन (३) पुष्प। प्रभु के सम्मुख रखकर जिन द्रव्यों से पूजा की जाती है उसे अग्रपूजा कहते हैं। अग्रपूजा करने के द्रव्य (१) धूप २ दीप, ३ अक्षत, ४ नवेद्य, ५ फल) इस प्रकार यह अष्ट प्रकार की पूजा आठ कर्मों का क्षय करनेवाली है। भावपूजा (चैत्यवन्दन स्तवनादि) मोक्ष देनेवाली है।

पाचवा अवस्थात्रिक

भाविज्ज अवत्थतिय, पिंडत्थ पयत्थ रुवरहियत्त।
छउमत्थ केवलित्त सिद्धत्त चेव तस्सत्थो ॥ ११ ॥

न्हवणच्चगेहिं छउमत्थ, वत्थ पडिहारगेहिं केवलिय।
पलिय कुस्सग्गेहिम, जिणस्स भाविज्ज सिद्धत्त ॥ १२ ॥

भाविज्ज – स्मरणकर	पिढत – पिंडअवस्था	पडिहारगेहिं–प्रतिहार्योंसे
अवत्थतिय–तीन अवस्थाको	चेर – निश्चय	केवलीअ – केवलीपना
पिंडथ – पिंडस्थ पयत्थ – पदस्थ	तस्सत्था – उसका अर्थ	पलियंक – पर्यंकासन
रुवरहियत – रूपरहित (निराकार)	न्हवण – स्नान	उस्सग्गेहिं–काउस्सग्गसे
छउमत्थ–छद्मस्थपना	अचणेहिं – द्रव्य पूजासे	जिणस्स–जिनेश्वर देवकी
केवलित–केवलीपना (केवल ज्ञानकी दशा)	छउमत्थवत्थ – छद्मस्थ अवस्था	भाविज्ज चिंतवन करना
		सिद्धत – सिद्धअवस्था

भावार्थ

हे भव्य प्राणी तू प्रभु की तीन अवस्था का चिंतवन (स्मरण) कर पिंडस्थ (छद्मस्थ) पदस्थ (केवलज्ञानरूप) और रूपरहित (निराकार)। छद्मस्थ केवली और सिद्धावस्था इन तीनों का अनुक्रम से स्मरण चिंतवन और ध्यान अवस्था त्रिक कहलाता है। न्हवण (प्रक्षाल) और द्रव्य पूजासे भगवान की छद्मस्थ (जन्म राज्य और दीक्षा) अवस्था का चिंतवन करना, आठ प्रति हार्यो से प्रभु की केवली अवस्था का चिंतवन करना पर्यंकासन और काउ-स्सग्ग मुद्रामें प्रभु की सिद्धावस्था का चिंतवन करना चाहिये।

विवेचन

छद्मस्थ अवस्था के तीन भेद हैं। १ जन्मावस्था २ राज्यावस्था ३ श्रमणावस्था। जिस समय भगवान का जन्म हुआ उस समय इन्द्रों का आसन चलायमान हुआ। उन्होंने अवधिज्ञान से जाना कि तीर्थंकर भगवान का जन्म हुआ है। वे प्रभु के जन्मस्थान पर आकर प्रभुको मेरु पर्वत पर ले गये, वहां इन्द्रोंने प्रभु का जन्मोत्सव जलादि द्रव्यों से किया। उस अवस्था का भगवान का प्रक्षाल करते समय स्मरण करना चाहिये। चन्दन पुष्प और आभूषण चढाते समय भगवान की राज्यावस्थाका चिंतवन करना चाहिये। और रोम (केश) रहित मस्तक और मुख देखकर मुनिअवस्था (श्रमणावस्था) का चिंतवन करना चाहिये।

छटा दिश त्रिक

उड्ढाहो तिरिआण तिदिसाण तिरिक्खण चइज्जहवा।
पच्छिम-दाहिण-वामाण जिणमुह-न्नत्थ-दिट्ठिजुओ ॥१३॥

उड्ढ – ऊँचा	निरिक्खणं – देखने का	दाहिण-दाहिनी (जीमणी)
अहो – नीचा	चइज्ज – त्याग	वामाण-बाँयी (डाबी) दिशा
तिरिआण – तिरछा	अहवा – अथवा	जिणमुह-प्रभुके सन्मुख
तिदिसाण-तीन दिशाओंको	पच्छिम – पीछेकी दिशा	नत्थ – स्थापन की हुई
		दिट्ठिजुओ – दृष्टिसे युक्त

भावार्थ

ऊंची नीची और तिरछी इन तीन दिशाओं में तथा अपने पीछे, दाहिनी और बांयी दिशा तरफ नहीं देखना चाहिये। केवल प्रभु के सन्मुख अपनी दृष्टि को रखना चाहिये।

सातवां भूमि प्रमार्जन त्रिक

चैत्यवंदन करने के प्रथम जीवों की रक्षा के लिये भूमि का प्रमार्जन करना चाहिये। मुनि रजोहरण से, पौषधवाला चरवले से और गृहस्थ वस्त्र के छोर से पग रखने की भूमि को तीन बक्त प्रमार्जन करे, यह सातवां भूमि प्रमार्जन त्रिक कहलाता है।

आठवां आलंबन और नववां मुद्रात्रिक

वन्नतिय वन्नत्था-लंबण मालंबणं तु पडिमाई।
जोग-जिण मुत्त सुत्ती-मुद्दाभेएण मुद्दतिय ॥१४॥

वन्नतिय – वर्णत्रिक	तुपडिमाइ-प्रतिमादिकका	मुत्तसुत्ती – मुक्तासुक्त
वन्नत्थ-वर्ण और अर्थका	जोग – योगमुद्रा	मुद्दाभेएण-मुद्राका भेद करके
आलंबण-आलंबन	जिण – जिनमुद्रा	मुद्दतियं – मुद्रात्रिक

अर्थ

वर्णआलबन, अर्थआल्बन और प्रतिमादिका आलबन ये तीन आठवा आलंबन त्रिक कहलाता है। योगमुद्रा, जिन मुद्रा और मुक्ताशुक्ति मुद्रा तीन मुद्रा नवमां त्रिक होता है।

विवेचन

मुद्रा-हाथ और पग की आकृति को कहते हैं। योगमुद्रा-दोनों हाथों को जोड़ने से बनती है। जिन मुद्रा-जिनेश्वर देव की तरह कायोत्सर्ग की आकृति का करने से होती है। और मुक्ताशुक्ति मुद्रा-मोती की सीप के जैसी हाथों से मुद्रा करने से होती है। वर्णालंबन-अक्षर, पद और संपदा बराबर बोलना, अर्थालंबन-सूत्रोंका अर्थ हृदय में विचारना, प्रतिमालंबन-जिन प्रतिमा या भावअरिहंत के स्वरूप का आल्बन करना।

प्रथम योग मुद्रा

अन्नुन्नतरि अंगुलि कोसागारेहिं दोहि हत्थेहि
पिट्टोवरि कुप्पर संठिएहिं तह जोगमुद्दत्ति॥ १५॥

अन्नुन्न-अन्योन्य, परस्पर	कोसागारेहिं – कमल के	कुप्पर-कोहनियोंको
(एकदूसरे में)	कोडे (पंखुडी) का	संठिएहिं-स्थापन की हुई
	आकार वाला	तह-उसको
अंतरि-रखते	दोहिहत्थहि-दोनोंहाथों से	जोगमुद्दति – योगमुद्रा
अंगुलि-दसों अंगुलियोंको	पिट्टोवरि-पेटक ऊपर	कहते हैं

अर्थ

हाथकी दसोंही अंगुलियों को परस्पर एकदूसरमें अंतर रखते हुये कमलके कोड (पंखुडी) की आकृति के अनुसार मिलाइ हुई व दोनों हाथोंकी कोहनियें पेटके ऊपर रक्खी हुई हों, हाथों की ऐसी आकृति योगमुद्रा कहलाती है।

दूसरी जिन मुद्रा

चत्तारि अगुलाई पुरओ उणाई जत्थ पच्छिमओ
पायाण उस्सग्गो ऐसा पुण होई जिण मुद्रा ॥ १६ ॥

चत्तारि–चार	जत्थ – जिस (मुद्रा) में	ऐसापुण–इस प्रकार
अगुलाई–अगुल	पच्छिमओ–पीछेके भाग में	होइ–होती है
पुरओ–आगे के भाग में	पायाण–पगसे	जिनमुद्रा–जिनमुद्रा
उणाई–कमआंगल	उस्सग्गो–काउस्सग्ग	

अर्थ

दोनों पैरों के आगे के भाग में चार अंगुलका अंतर और उससे कम अंतर पीछे के भाग में रखकर काउस्सग्ग (कायोत्सर्ग) (दोनों पैरों के ऊपर सीधा खडा रहना) करना यह जिनमुद्रा कहलाती है।

तीसरी मुक्ता शुक्ति मुद्रा

मुत्ता सुत्ती मुद्दा जत्थसमा दोवि गभिआ हत्था।
ते पुण निलाडदेसे लग्गा अन्ने अलग्गत्ति ॥ १७ ॥

मुत्ता सुत्ती= मुक्ताशुक्ति	गभिआ – पोलेरखे हुए	लग्गा – लगे हुए
मुद्दा = मुद्रा	हत्था – हाथ	अन्ने –
जत्थ – जिस मुद्रामें	ते पुण – वैसी	दूसरे आचार्योंके मतसे
समा – बराबर (समान)	निलाडदेस – मस्तकपर	अलग्गत्ति–बिना
दोवि – दोनों		लगाये हुए

अर्थ

दोनों हाथों को बराबर पोला जोडकर मस्तकपर लगाना (किसी किसी आचार्यों के मत मे न लगाये हुए हों तोभी) मुक्ता शुक्ति मुद्रा कहलाती है।

विवेचन

पुरुषों को मस्तक पर हाथ लगाना और स्त्रियों के स्तनादि अवयवों के दृष्टि गोचर होनेसे मस्तक पर हाथ लगाना निषेध किया है। इस प्रकार दोनों आचार्यों के मत में कोई अंतर नहीं है (मान्य है)।

किस मुद्रामे कौन सी क्रिया करना

पचगो पाणीया थो थय पाढो होई जोग मुद्राश्रे
वदण जिण मुद्राश्रे पणिहाण मुत्त सुत्तीअे ॥ १८ ॥

पचगो – पचाग	होइ – होता है	जिणमुद्राअे –जिनमुद्रासे
पणिवाओ – प्रणिपात	जोगमुद्राअे – योगमुद्रासे	पणिहाण – प्रणिधान
थयपाढो – स्तवनपाठ	वंदण – चैत्य-स्तवन	मुत्तसुत्तीअे मुक्ताशुक्ति से

अर्थ

पचांग प्रणिपात (दोनों पैर घुटना सहितव दोनों हाथ व मस्तक इन पांच अंगोसें खमासमण) और स्तवनपाठ (चैत्यवंदन, नमुत्थुण स्तवनादि) योग मुद्रासे होते हैं । अरिहंत चेइआण और काउस्सग्गादि जिन मुद्रासे होते हैं। प्रणिधान (जावंतिचेइ आइ जावत केवि साहू और जयवीय राय) यह मुक्ता शुक्ति मुद्रा से होते हैं।

पणिहाण तिगं चेइअ, मुणिवदण पत्थणा सरुयवा
मण-वय - का अेगत्त, सेस तियत्थोय पयडुति ॥ १९ ॥

पणिहाण तिग – प्रणिधान त्रिक	मण, वय – मन वचन और
चेइअ – चैत्यवंदन	काअगत्त – कायाका एकाग्रत्व
मुणि वंदण – मुनिवंदन	सेस – बाकीके
पत्थणासरूवं – प्रार्थना स्वरूप	तियत्थो – त्रिकका अर्थ
वा – अथवा	पयडुत्ति – प्रगट है

अर्थ

प्रणिधान त्रिक चैत्यवंदन (जावंतिचेइ आई) मुनिवंदन (जावंत केविसाहू) और प्रभु की प्रार्थना स्वरूप (जयवीयराय) होता है। या मन, वचन और काया की एकाग्रतारूप प्रणिधान त्रिक कहलाता है। बाकी के त्रिक (दूसरा प्रदक्षिणात्रि और सातमा भूमि प्रमार्जन) का अर्थ प्रकटही है।

द्वितीय (दूसरा) पांच अभिगम द्वार

सचित्त दव्व मुज्झण मचित्तमणुज्झण मणेगत्त
इग साडि उत्तरासगु अजली सिरसि जिणदिट्ठे ॥२०॥
इअ पचविहाभिगमो, अहवामुच्चति रायचिण्हाइ
खग्ग छत्तोवाणह मउड चमरे अपचमअे ॥ २१ ॥

सचितदव्व–सचितवस्तु	अजली–दोनों हाथ जोड़ना	मुच्चन्ति – त्याग करना
उज्झण – त्याग	सिरसि – मस्तक पर	रायचिण्हाइ – राज्यचिन्ह
अचित्त – अचितवस्तु	जिणदिट्ठे–प्रभुके दर्शन होनपर	खग्ग – खड्ग
अणुज्झण – त्याग नहीं करना	इअ – इस प्रकार से	छत्त – छत्र
मणेगत्त मनकी एकाग्रता	पचविह – पांच प्रकारका	उवाणह – पादुका (जूते)
इगसाडि – एक पटका	अभिगमो – अभिगम	मउड – मुकुट
उत्तरासगु – उत्तरासन (उपरकावस्त्र)	अहवा – अथवा	चमरे – चामर
		पंचमअे – पांचवा

अर्थ

अपने शरीर पर रहे हुए पुष्पादि सचित वस्तुका त्याग करना, २ वस्त्र आभूषणादि अचित वस्तु का त्याग नहीं करना, ३ मन की एकाग्रता करना, ४ एक पट का उत्तरासन करना, ५ प्रभु के मुखारविंद के दर्शन होते ही दोनों हाथों को मस्तक पर रखकर जोड़ना। अभिगम इस तरह पांच प्रकार का (देव और गुरु के सन्मुख) करना चाहिये। यदि वंदन करने के लिये राजा आता होतो उसको राज्य चिन्ह जैसे १ खड्ग (तलवार) आदि शस्त्र, २ छत्र, ३ पादुका ४ मुकुट, ५ चामर इस प्रकार राजचिन्ह त्याग कर जिनालय में प्रवेश करना चाहिये। इस को पांच अभिगम कहते हैं।

तीसरा दो दिशा और चौथा तीन अवग्रह द्वार

वन्दन्ति जिणेदाहिण-दिसिट्ठिआ पुरिसवामदिसि नारी
नवकर जहन्नु साट्ठिकर, जिट्ठ मज्झुग्गहो सेसो ॥२२॥

वंदन्ति-नमस्कार करना	पुरिस – पुरुषवर्ग	साट्ठिकर – साठ हाथ
जिणे-जिनेश्वर भगवानको	वामदिसि – बांयी तरफ	जिट्ठ – उत्कृष्ट
दाहिण-दक्षिण (दाहिनी)	नारी – स्त्री वर्ग	मज्झ – मध्यम
दिसि – दिशा	नवकर – नव हाथ	उग्गाहो – अवग्रह
ट्ठिआ – खड़ेरहकर	जहन्नु – जघन्य से	सेसो – बाकी का

अर्थ

भगवान के दक्षिण (दाहिने हाथ की तरफ) दिशा की तरफ पुरुष वर्ग को खड़े रहकर और बांयी (बायें हाथ की तरफ) दिशा की तरफ स्त्री वर्ग को खड़े रहकर प्रभु को वंदन करना चाहिये। प्रभु से कम से कम ९ हाथ दूर रहकर चैत्यवंदन करना जघन्य अवग्रह है और अधिक से अधिक

४ थुइ ग वदन को मध्यम चैत्यवदन कहते हैं, ३ पांच दण्ड—नमुत्थुणं, अरिहंत चइआणं, लोगस्स पुक्खरवरदीवड्ढे, सिद्धाणं बुद्धाणं स्तुति चतुष्क ८ थुइ स्तवन और तीन प्रणिधान स वदना करने को उत्कृष्ट चैत्यवदन कहते हैं । किसी २ आचार्य का मत है कि एक नमुत्थुणं से की गई वंदना जघन्य चैत्यवदन दो या तीन नमुत्थाणं से की गई वदना मध्यम चैत्यवदन और चार या पांच नमुत्थुण से की गइ वदना उत्कृष्ट चैत्यवंदन कहलाता है ।

विवेचन

हाथ जोड़कर मस्तक नमाकर "नमो जिणाणं" 'नमो अरिहंताणं' आदि श्लोक से या वर्तमान में जो चैत्यवदन करने की परिपाटी है वह जघन्य चैत्यवंदन की गिनती में आता है । प्रथम तीन स्तुति से जिनेश्वर भगवान व ज्ञान को वंदना होती है इस लिये उस का नाम वदन स्तुति और अंतिम स्तुति समकित दृष्टि देव की सहायता रूप होनेसे अनुशासित स्तुति कहलाती है इस लिये स्तुति—युगल यानें वदना और अनुशासितरूप स्तुति को युगल समझना चाहिये ।

छट्ठा पंचांग खमासमण और सातवा नमस्कार द्वार

पणिवाओ पचगो दो जाणू करदुगुत्तमगंच
सुमहत्थ नमुक्कारा इगदुग तिग जाय अट्ठसय ॥२५॥

पणिवाओ – प्रणिपात	च – और	इग दुग तिग – एक दो तीनसे
पचगो – पचांग	सुमहत्थ – बहुत विस्तार पूर्वक अर्थवाला	जाव – तक
दो जाणू – दोनोघुटने	नमुक्कारा – नमस्कार (श्लोक छद)	अठ सय–अेकसो आठ
दु – दोनो		
– मस्तक		

अर्थ

दोनों घुटने पैरसहित, दोनों हाथ और मस्तक इन पाचों अगों को जमीन पर लगाकर नमस्कार करना यह पचांग प्रणिपात या खमासमण होता है। एक दो, तीन या लगाकर १०८ श्लोक आदि अर्थ गूढ अर्थयुक्त हों। और ऐसे होने चाहिये कि जिन से प्रभुभक्ति, प्रभु के गुणगान, प्रभु के स्मरण की ही पुष्टि, अथवा ज्ञानभक्ति और वैराग्य की पुष्टि होती हो। तथा कर्मों के क्षय करने के लिये आत्म निंदारूप स्तवन हों। (औपदेशिक भजन कभी नहीं बोलना चाहिये। वर्तमान समय में औपदेशिक स्तवन बोलने की बहुत परिपाटी चल पड़ी है यह तो भगवान की आशातना है, क्यों कि हम भगवान को उपदेश देने के लिये वहां उपस्थित नहीं हुए हैं।

आठवा अक्षर द्वार (९ सूत्रों का)

अडसट्ठी अट्ठवीसा नवनउय सयच दुसयसगनउया
दोगुणतीसदुसट्ठ दुसोल अट्ठनउयसय दुवन्नसय ॥२६॥
इयनवकार-खमासमण इरिअ-सक्कत्थ आइदंडेसु
पणिहाणेसुअ अदुरुत्त वन्नसोलसय सीयाला ॥२७॥

अड़सट्ठि – अड़सठ
अट्ठविसा – अट्ठाइस
नवनउयसय – एक सो निन्नावें १९९
दुसय सगनउया – दोसो सित्यानवे १९७
दोगुण तीस – दोसो उनतीस २२९
दुसट्ठा-दोसो साठ २६०
दुसोल-दोसो सोलह २१६
अट्ठनउयसय – एकसो इट्ठयानवे १९८
दुवन्नसयं – एकसो बावन १५२
इअ – इस प्रकार
नवकार – नवकार
खमासमण – खमासमण
इरिअ – इरियावही
सक्कत्थयाइ–नमुत्थुणादि
दंडेसु – दंडक में
पणिहाणेसु–प्रणिधान में
अदुरुत्त–एक वक्त कहे हुवे
वन्न – अक्षर (वर्ण)
सोलसयसीयाला–सोलहसो सैतालीस १६४७

अर्थ

नवकार के ६८, खमासमण के २८, इरियावही के १६६, नमुत्थुण के २९७, अरिहत चेइयाण के २२६, लोगस्स के ६०, पुक्खरवरदीहूे के २१६, सिद्धाण बुद्धाण के १९८, प्रणिधान के १५२, अक्षर होते हैं, इस प्रकार से नवकार, खमासमण, इरियावहि, नमुत्थुण आदि पांच दडक और प्रणिधान तीन, इन सब मे मिलकर एक वक्त कहे १६४७ अक्षर हैं ।

विवेचन

नवकार (पच मगल महाश्रुतस्कध) के ६८ अक्षर, प्रणिपात (खमासमण) के २८ अक्षर, इरियावहि (प्रतिक्रमणश्रुतस्कध) के १६६ अक्षर, ठामि काउस्सग तक, शक्रस्तव (नमुत्थुण) क २९७ अक्षर, चैत्यस्तव (अरिहत चेइयाण) क २२६ अक्षर अप्पाण वोसिरामितक नामस्तव (लोगस्स) क २६० अक्षर, सव्वलोए तक, सिद्धस्तव (सिद्धाण बुद्धाण) के १९८ अक्षर सम्मदिट्ठिसमाहिगराण तक और प्रणिधान तीन (जावति चेइयाई के ३५, जावत केवि के ३८ और जयवियराय के ७९ अक्षर आभवं खंडातक) कुल १५२ अक्षर हैं, वारिज्जइ इत्यादि गाथा प्रक्षिप्त होनेसे यहां गिनती नहीं की गइ है । इस प्रकार कुल १६४७ अक्षर हैं ।

नववां पद संख्या द्वार (७ सूत्रों का)

नवबतीस तितीसा तिचत्त अडवीस सोलवीस पया
मगल इरिया सक्कत्थ याइसु अेग सीइसय ॥ २८ ॥

नव — नो ९	सोल — सोलह १६	सक्कत्थ आइसु—शक्रस्तवादि पांच सो
बत्तीस — बत्तीस ३२	वीसपया — बीसपद	
तितीसा — तेंतीस		अेगसीइसय — एकसो इक्यासी १८१
तिचत्त — तिरतालीस ४३	मगल — नवकार	
— अट्ठाइस २८	इरिआ — इरियावहि	

अर्थ

नवकारके ६ इरिआवहिआए के ३२, नमुत्थुण के ३३, अरिहंत-चेइआण के ४३, लोगस्सके २८, पुक्खरवरदिवड्ढ के १६ और सिध्दाण बुध्दाणंकी २० पद हैं। नवकार, इरियावहि नमुत्थुण, अरिहंतचेइआणं लोगस्स, पुक्खरवरदीवड्ढे और सिद्धाणबुद्धाणं अनुक्रमसे इनसब में मिलकर १८१ पद हैं। जिसके अन्त में विभक्ति हो या जिस जगह अर्थ पूर्ण होता हो उसे पद कहते हैं।

दसवा संपदा संख्याद्वार (७ सूत्रों का)

अट्ठट्ठनवट्ठय अडवीस, सोलसय वीस वीसामा।
कमसो मगल इरिआ सक्कतथयाइसु सगनउइ ॥२६॥

अट्ठट्ठ – आठआठ	वीस – बीस	इरिआ – इरियावहि
नवट्ठय – नव, आठ और	वीसामा – संपदा	सक्कत्थयाइसु – शक्र-स्तवादि में
अडवीस – अठाइस	कमसो – अनुक्रमसे	सगनउइ – सित्यानवे
सोलसय–सोलह और	मगल – नवकार	

अर्थ

नवकारकी ८, इरियावहिकी ८, नमुत्थुण की ६, अरिहंतचेइआण की ८, लोगस्स की २८, पुक्खरवरदिड्ढे की १६, सिद्धाणंबुद्धाणं की २० संपदा है। नवकार, इरियावहि, नमत्थुण, अरिहंतचइयाण, लोगस्स, पुक्खरवरदीवड्ढे और सिद्धाणबुद्धाणं अनुक्रमसे इनसब में मिलकर ९७ संपदा है। विश्राम के स्थानको संपदा कहते हैं।

विवेचन

उपरोक्त ५ सूत्रोंकी पद और सपदाकी गिनती इस प्रकार करना चाहिये। नवकारकी हवइ मंगल तक, इरियावहिआएकी ठामि काउस्सग्गं तक, नमुत्थुणंकी जिअभयाणतक, अरिहंतचेइआणंकी अप्पाणंवोसिरामि तक, लोगस्सकी सिद्धा सिद्धं मसदिसंतु तक, पुक्खरवरदिवड्ढेकी धम्मुत्तर वड्ढेउतक, और सिद्धाणंबुद्धाणंकी सिद्धा सिद्ध ममदिसंतु तक, पद और सपदा होती हैं।

नवण ठुसट्ठि नव पय नवकारे अट्ठ सपयातत्थ।
सगसपय तुल्ला, सतरक्खर अट्ठमीदुपया ॥ २० ॥

वण्ण – अक्षर	अट्ठसपया – आठ सपदा	पयतुल्ला–पदके अनुसार
अट्ठसट्ठि – अड़सठ (६८)	तत्थ – उस (नवकारमें)	सतरक्खर–सतरह (१७) अक्षर की
नवपय – नवपद (९)	सगसपय – सात (७) सपदा	अट्ठमी – आठवीं
नवकारे – नवकार में		दुपया – दो पदवाली

नवकारमें ६८ अक्षर, ९ पद और ८ सपदा है उसमे ७ सपदा पद के अनुसार हैं और १७ अक्षर की आठवीं सपदा अन्तिम दो पदवाली है।

पणि चाय अक्खराइं अट्ठावीस तहायइरियाए
नवनउअ मक्खरसय दुतीसपय सपया अट्ठ ॥ २१ ॥

पणिवाय-खमासमणा के	इरिआए-इरियावहीआएम	सपयाअट्ठ–आट्ठ सपदा ८
अक्खराइं –अक्षर	नवनउ इ – निन्यानवे	
अट्ठावीस – अट्ठाइस	अक्खरसय-एक सो अक्षर	
तहाय – इसी प्रकार	दुतीससय–बत्तीस(३२)पद	

अथ

खमासमणमें २८ अक्षर हैं इसी प्रकार इरियावहीआएमें १९९ अक्षर, ३ पद और ८ सपदा हैं।

इरियावहिआए की ८ संपदा के पद की संख्या और आदि (प्रथम) पद

दुग दुग इग चउ इग पण, इगार छग इरिय सपाइपया ।
इच्छा इरि गमपाणा, जे मे अेगिंदिअभिनतस्स ॥ ३२ ॥

दुग दुग – दो दो	आइपया – आदिपद	पाणा – पाणक्कमणे
इग चउ – एक चार	इच्छा – इच्छाकारेण	जेमे – जेमे जीवा
इग पण – एक, पांच	इरि – इरियावहिआअे	अेगिदि – अेगिंदिआ
इगारछग – ग्यारह, छ	गम – गमणागमणे	अभि – अभिहया
इरियसपय – इरियाव हिआए की संपदाएं		तस्स – तस्स उत्तरी

अर्थ

इरियावहिआएकी पहली संपदा दो पद की, दूसरी संपदा २ पदकी, तीसरी संपदा १ पद की, चौथी संपदा ४ पद की, पांचवी संपदा १ पद की, छठी संपदा ५ पदकी, सातवी संपदा ११ पद की, आठवी संपदा ६ पदकी हैं। इस इरियावहिआएकी ८ संपदा के प्रथम पद अनुक्रमसे इस प्रकार हैं। १ इच्छाकारेणे, २ इरियावहिआअे, ३ गमणागमणे, ४ पाणक्कमणे, ५ जेमेजीवा, ६ अेगिंदीआ, ७ अभिहया और ८ तस्स उत्तरी ।

इरियावहिआए की ८ संपदा के नाम

अब्भुवगमो निमित्तं, ओहे अरहे उसगहे पंच ।
जीव विराहण पडिक्कमण, भेयओ तिन्नि चूलाअे ॥३३॥

अब्भुवगमो-अभ्युपगम (पाप की आलोचना) का स्वीकार	ओह-ओघ (सामान्य हेतु)	विराहण-विराधना
	इअरहेउ-विशेष हेतु	पडिक्कमण-प्रतिक्रमण के
	संगहे पंच-संग्रह पांचवी	भेयओ – भेदसे
निमित्त – निमित्तकारण	जीव – जीव	तिन्नि – तीन

कारण रूप), ६ सविशेष उपयोग के कारण रूप, ७ स्वरूप हेतु ८ निज समफलद (अपने समान फल देनेवाला), और ६ मोक्ष सपदा है ।

विवेचन

१ स्तोतव्य आरहत भगवान भव्य जीवों के लिये स्तुति करने योग्य हैं, २ ओघ-स्तुति करने का सामान्य कारण ३ इतर हेतु-सामान्य कारण को ज्यादा स्पष्ट करनेवाली, ४ उपयोग-स्तोतव्य सपदा के अर्थ को विशेष स्पष्ट करनेवाली, ५ तद्धेतु-उपयोग सपदा का हेतु बतलानेवाली, ६ सविशेष उपयोग-उपयोग हेतु सपदा का समर्थन करनेवाली ७ स्वरूप हेतु-आरहत भगवान के स्वरूप को बतानेवाली, ८ निज समफलद-शुद्ध हृदय से स्तुति करने वाले को प्रभु अपने समान फल देनेवाले ६ मोक्ष-मोक्षपद को प्राप्त हुए भगवानकी स्तुति रूप और मोक्ष गुण के स्वरूपको बतलानेवाली यह सपदा हैं ।

नमुत्थुण और अरिहत चेइआण के अक्षर पद और सपदा की कुल सख्या

दो सग नउ आवन्ना, नव सपय पयतितीस सक्कत्थअ ।
चेइयथयट्ठ-सपय, तिचत्त-पयवन्न-दुसय गुणतीसा ॥३६॥

दो सगनउआ-दो सो सित्यानवे २६७	पयतिस-३३ तेतीस पद	तिचत्तपय - ४३ तीरतालीस पद
वन्ना - अक्षर	सक्कत्थए-नमुत्थुण में	वन्न - अक्षर
नवसपय-(६) नौ सपदा	चेइयथय-चैत्यस्तव की	दुसय - दोसो
	अट्ठसपय - आठ सपदा	गुणतीसा - उनतीस

अर्थ

नमुत्थुण में २६७ अक्षर, ६ सपदा, और ३३ पद हैं । चैत्यस्तव (अरिहतचेइआण) के २२६ अक्षर, ८ सपदा और ४३ पद हैं ।

चैत्यस्तव (अरिहंतचेइआण) की प्रत्येक सपदा के पद की संख्या और आदि पद

दु-छ-सग-नव तिय-छ-चउ, छप्पय चिइ सपया पया पढमा।
अरिह वदण सद्धा अन्न सुहुम अेव जा ताव ॥ ३७ ॥

दु छ सग-दो, छ, सात	सपया – सपदा के	सद्धा – सद्धाअे
नव तिय – नौ, तीन	पया पढमा–पहलेके पद	अन्न – अन्नत्थ
		सुहुम – सुहुमेहिं
छ चउ – छ चार	अरिहा–अरिहतचइआण	अेव – अेवमाइअेहिं
छप्पय – छ पद		जा – जावअरिहंताण
चिइ – चैत्यस्तव की	वदण – वदणवत्तिआअे	ताव – तावकायं

अर्थ

अरिहतचइआण की संपदा २, ६, ७, ६ ३, ६, ४ और ६ पद की है। उसके प्रथम का पद अनुक्रम से इस प्रकार है। अरिहन २ पद की, वदण ६ पद की सद्धाअे ७ पद की, अन्नत्थ ६ पद की, सुहुमेहिं ३ पद की, अेव ६ पद की, जाव ४ पद की, और ताव ६ पद की है।

चैत्यस्तव (अरिहंतचेइआण) की ८ सपदा के नाम

अब्भुवगमो निमित्त हेउइग बहु वयत आगारा।
आगतुग आगारा उस्सग्गावहि सरुवट्ठ ॥ ३८ ॥

अब्भुवगमो – अभ्युपगम (वंदन का स्वीकार)	बहुवयंत – बहुवचनांत आगार	उस्सग्ग – कायोत्सर्गका
		अवहि–अवधि (मर्यादा)
निमित्त – निमित (कार्य)	आगतुग – भविष्य के लिए	सरुव – स्वरूप (काउस्सग्ग)
हेउ – हेतु (कारण)		
इगवयत – एकवचनांत	आगारा–आगार (छुट)	अट्ठ – आठ

अर्थ

प्रथम अभ्युगम (वदन करनेका स्वीकार), २ निमित्त (कार्य), ३ हेतु (कारण) ४ एक वचनात (आगार), ५ बहु वचनान्त (आगार–छुट) ६ आगतुग आगार (भविष्य के लिये) ७ कायोत्सर्ग की अवधि (समय) और ८ काउस्सग्ग का स्वरूप, इस प्रकार आठ सपदा है ।

विवेचन

१ **अभ्युपगम**–प्रभु के वंदन करने का स्वीकार करना, २ **निमित्त**–काउस्सग्ग किस कार्य के लिये करना, ३ **हेतु (कारण)** श्रद्धादि गुणसहित चढते परिणामों से काउस्सग्ग करे तब ही यह आत्मा सफलता को प्राप्त होती है ४ **एकवचनातआगार**–आगार रखने के सिवाय निरतिचार रूप में कायोत्सग नहीं होता है इसलिये एक वचनांत आगार रखना–(जिस के अन्त में तृतीय विभक्ति का एक वचन हो वह एकवचनांत आगार) ५ **बहुवचनातआगार**–जिसकेपीछे तृतीया विभक्ति का बहुवचन हो, ६ **आगतुग आगार**–भविष्य में किसी भी तरफ का बिना विचार किया हुवा असह्य उपद्रव उपस्थित हो जाय तो उसी समय काउस्सग्ग संपूर्ण कर के दूसर स्थान पर जाकर पुन काउत्सग्ग करना, **कायोत्सर्ग अवधि**–काउस्सग कि मर्यादा 'नमो अरिहंताणं' पद बोलकर संपूर्ण करना, ८ **स्वरूप** सपदा–स्थान से मौन स और ध्यान से कायोत्सग करना ।

लोगस्स, पुक्खरवर दिवड्ढे और सिद्धाणं–बुद्धाणं की सपदा और अक्षरों की संख्या

नामथयाइसु संपय, पयसय अट्ठवीस सोलवीस कमा ।
अदुरुत्त-वन्न दोसट्ठ, दुसय सोल-ट्ठनउ असय ॥ ३६ ॥

११ वा पाच दडक और १२ वा देवनेदन के बारह अधिकारों का द्वार

पणदडा सक्कत्थय, चेइयनाम सुअसिद्धत्थयइत्थ ।
दोइग दो दो पचय, अहिगारा बारस कमेण ॥४१॥

पणदडा – पांच दडक	सिद्धत्थय – सिद्धस्तव (सिद्धाण बुद्धाण)	पाच – पांच
सक्कत्थय – शक्रस्तव (नमु थुण)		अहिगारा – अधिकार
चइय – चैत्यस्तव (अरिहन्त चेइआण)	इत्थ-ऐसे (पांचदडक)मे	
नाम–नामस्तव(लोगस्स)	दो इग = दो, एक	बारस – बारह
सुय – श्रुतस्तव (पुक्खरवरदि)	दो दो – दो दो	कमेण – अनुक्रम से

अर्थ

१ शक्रस्तव (नमुत्थुण), २ चैत्यस्तव (अरिहतचेइआण), ३ नामस्तव (लोगस्स) ४ श्रुतस्तव (पुक्खरवरदिवड्ढे) ५ सिद्धस्तव (सिद्धाणं बुद्धाण) ये पाच दडक हैं और इसमें अनुक्रम से (शकस्तव मे) २, (चैत्यस्तवमें) १, (नामस्तव मे) १, (श्रुतस्तव,) २, और (सिद्धस्तव में) ५ अधिकार हैं सब मिलकर १२ अधिकार होते हैं ।

सूत्र	सूत्रों के नाम	पद की संख्या	संपदा	सर्व अक्षर	गुरु अक्षर	लघु अक्षर
नवकार	पचमगलसुय स्कध	९	८	६८	७	६१
इच्छामि खमासमणो	प्रणिपात, थोभसूत्र		०	२८	३	२५
इरियावहि	पडिक्कमणा सूत्र	३२	८	१९९	२४	१७५
नमुत्थुण	शक्रस्तव	३३	९	२९७	३३	२६४
अरिहन्तचेइयाण	चैत्यस्तवाध्ययन	४३	८	२२९	२९	२००
लोगस्स	नामस्तव	२८	२८	२६०	२८	२३२
पुक्खरवरदिवड्ढे	श्रुतस्तव	१६	१६	२१६	३४	१८२
सिद्धाण-बुद्धाण	सिद्धस्तव	२०	२०	१९८	३१	१६७
जावतिचेइयाइ	प्रणिधान त्रिक			१५२	१२	१४०
जावत केविसाहू						
जयवीयराय				[illegible]	[illegible]	[illegible]
सब मिलाकर जोड		१८१	९७	१६४७	२०१	१४४६

	इरियावहि की सपदा के नाम,		सपदा के पद आदि पद
१	अभ्युपगम सपदा	२	इच्छा कारण
२	निमित संपदा	८	इरियावहिआअे
३	ओघ संपदा	१	गमणागमणे
४	इतरहेतु सपदा	४	पाणक्कमणे
५	सग्रह सपदा	१	जेमेजीवा विराहिआ
६	जीव संपदा	५	अेगिंदिया
७	विराधना सपदा	११	अभिहया
८	पडिक्कमण सपदा	८	तस्स उत्तरी

	शक्रस्तव की सपदा के नाम		सपदा के पद आदि पद
१	स्तोतव्य सपदा	२	नमुत्थुण
२	ओघ सपदा	३	आइगराण
३	इतरहेतु सपदा	४	पुरिसुत्तमाण
४	उपयोग सपदा	५	लोगुत्तमाण
५	तद्धेतु सपदा	५	अभयदयाण
६	सविशेषोपयोग संपदा	८	धम्मदयाण
७	स्वरूपहेतु सपदा	२	अप्पडिहयवर
८	निजसमफलद सपदा	४	जिणाणं जावयाण
९	मोक्ष संपदा	३	सव्वनूण

	चैत्यस्तव की संपदा के नाम,		संपदा के पद आदि पद
१	अभ्युपगम संपदा	२	अरिहंत चेइआण
२	निमित्त संपदा	६	वन्दण वत्तिआअे
३	हेतु संपदा	७	सद्धाअे
४	एकवचनांत आगार संपदा	९	अन्नत्थ उससीअेणं
५	बहुवचनांत आगार संपदा	३	सुहुमेहिं अंगसचालेहिं
६	आगन्तुग आगार संपदा	६	अेवमाइ अेहिंआगारेहिं
७	कायोत्सर्गविधि संपदा	४	जाव अरिहंताण
८	स्वरूप संपदा	६	तावकाय

१२ अधिकार के आदि पद

नमुजेमइ-अरिह ल्गेग सव्व पुक्खतम सिद्धि जो देवा।
उज्जिचत्ता-वेआ-वच्चग अहिगार पढम पया ॥४२॥

नमु – नमुत्थुण	पुक्ख-पुक्खरवरदिवड्ढे	चत्ता – चत्तारिअट्ठ
जेअ – जअअइआ	तम – तम तिमिर	वेयावच्चग – वेआवच्च गराणं
अरिह-अरिहंतचेइआणं	सिद्ध – सिद्धाण बुद्धाणं	अहिगरा–अधिकार के
ल्गेग – लोगस्स	जो देवा–जो देवाणवि	पढमपया – प्रथम पद
सव्व – सव्वलोअे	उज्जि – उज्जित सेल	(आदि पद)

अर्थ

१ नमुत्थुण २ जेअआइयासिद्धा, ३ अरिहंतचेइआणं, ४ लोगस्स उज्जोअगर, ५ सव्वलोअे अरिहंतचेइआण, ६ पुक्खरवरदिवड्ढे, ७ तम तिमिर, ८ सिद्धाण बुद्धाण, ९ जो देवाण वि, १० उज्जित सेल ११ चत्तारिअट्ठ, १२ वेयावच्चगराण ये बारह अधिकार के प्रथम पद हैं।

विवेचन

दण्डक-दण्ड (लकड़ी) की तरह सरल और लम्बाई में हो ऐसे ये पांच सूत्र (नमुत्थुण अरिहंतचेइयाणं लोगस्स, पुक्खरवरदिवड्ढे, सिद्धाणं बुद्धाणं) अर्थ से सरल और मूल में बहुत लम्बाईवाले है ।

कौन २ से अधिकार में किस किस को वंदन होती है यह कहते है

पढमहिगारे वंदे, भाव जिणे, बीयअे उ दव्व जिणे ।
इगचेइय ठवण जिणे, तइय चउत्थम्मि नाम जिणे ॥४३॥
तिहुअण-ठवण जिणे पुण, पंचमअे विहरमाण जिण छट्ठे ।
सत्तमअे सुयनाण, अट्ठमअे सव्वसिद्ध-थुइ ॥४४॥
तित्थाहिव-वीरथुइ-नवमे दसमेय उज्जयंत थुइ ।
अट्ठावयाइ इगदिसि, सुदिट्ठिसुर-समरण चरिमे ॥ ४५ ॥

पढम – प्रथम
अहिगारे – अधिकार में
वंदे – वंदन करता हूं
भावजिणे–भावजिनेश्वरोंको
बीअअे–दूसरे अधिकार में
उदव्व जिणे–तथा द्रव्य जिनेश्वरों को
इगचेइअ–एक चैत्य के
ठवण जिणे – स्थापना जिन को

तइय–तीसरे अधिकार में
चउत्थम्मि – चौथे अधिकार में
नाम जिणे – नाम जिनेश्वरों को
तिहुयण–तीन भुवन के
ठवण – स्थापना
जिणे – जिनेश्वरों को
पुण – तथा
पंचमअे – पांचवे अधिकार में

विहरमाण – विचरते
जिण – जिनेश्वरों को
छट्ठे–छट्ठेअधिकार में
सत्तमअे – सातवें अधिकार में
सुयनाण–श्रुत ज्ञान को
अट्ठमअे – आठवां में
सव्व – सर्व
सिद्धथुइ–सिद्धोंकि स्तुति
तित्थाहिव – तीर्थ के स्वामी

वीरथुइ-वीर प्रभु की स्तुति	थुइ – स्तुति	सुदिट्ठिसुर–सम्यक दृष्टि देव की
नवमे – नवमें में	अट्ठावयाइ – अष्टापदादि की	समरण – स्मरण करना
दसमे – दसमें में	इगदिसि – ग्यारहवें में	चरिमे – अन्तिम अधिकार में
उज्जत – गिरनार पर्वत की		

अर्थ

पहिले अधिकार में भाव जिनों को और दूसरे अधिकार में द्रव्य जिनों को मैं वंदन करता हूं। तीसरे अधिकार में १ मंदिर में स्थापित जिनेश्वरों को और चौथे अधिकार में नाम जिनों को वंदना करता हूं। पांचवें अधिकार में तीन लोक में स्थापित जिनों को, छठे अधिकार में अढाई द्वीप में विचरते हुए जिनेश्वरों को मैं वंदन करता हूँ सातवें अधिकार में श्रुतज्ञान को वंदना करता हूँ आठवें अधिकार में सर्व सिद्धों की स्तुति है (सिद्ध भगवानों को मैं वंदन करता हूं), नवमे अधिकार में तीर्थ के स्वामी श्री वीर प्रभु की स्तुति, दसवें अधिकार में गिरनार तीर्थ पर स्थापित श्री नेमिनाथ प्रभु की स्तुति ग्यारहवें अधिकार में अष्टापदादि पर स्थापित ऋषभादि जिनवरों की स्तुति, अंतिम बारहवें अधिकार में सम्यग दृष्टि देव का स्मरण करना।

विवेचन

इस ग्यारहवें अधिकार में अनेक प्रकार से देवों को वंदन किया है उसमें से कुछ यहां बतलाते हैं। १ संभवादि (संभव, अभिनंदन, सुमति पद्म प्रभु) इन चार जिनेश्वर देवों की मूर्तियों को दक्षिण दिशा में, सुपार्श्वादि (सुपार्श्व चन्द्रप्रभ, सुविधि शीतल, श्रेयांसनाथ वासुपूज्य विमल नाथ अनंतनाथ) इन आठ जिनेश्वर देवों की प्रतिमाओं को पश्चिम दिशा में, (धर्मनाथ शान्तिनाथ, कुंथुनाथ अरनाथ मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत नमिनाथ

नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर) इन दस जिनेश्वर देवों की प्रतिमाओं को उत्तर दिशा में तथा ऋषभ देव और अजितनाथ इन दो जिनेश्वर देवों की प्रतिमाओं को पूर्व दिशा में इस प्रकार २४ चौबीस तीर्थंकर जिनेश्वर देवों की स्फटिक मणि की प्रतिमाओं को भरत राजा ने अष्टापद पर्वत के ऊपर स्थापित किया । (ये प्रतिमाएं उनके शरीर की अवगाहना के अनुसार निर्माण की गई और सब एक ही आसन में स्थापित की गई अर्थात सबकी नासिका एक ही अइन में हैं) इन प्रतिमाओं का मैं वंदन करता हूँ। (२) चार को आठ से गुणा करने से ३२ होते हैं और दस को दो से गुणा करने से २० होते हैं इन दोनों की जोड़ ३२+२०=५२ होती हैं ये गिनती नन्दीश्वर द्वीप में हैं उनको मैं वंदना करता हूँ। (३-४) चत-त्याग किया है अरि-शत्रुओं (राग द्वेष आदि) का जिन्होंने ऐसे अट्ठदश अट्ठारह और पीछे के दो मिलाने से बीस होते हैं ये बीस (अजित, संभव अभिनन्दन सुमति पद्मप्रभ, सुपार्श्व चन्द्रप्रभ सुविधि, शीतल, श्रेयांस, विमल, अनन्त धर्म, शांति, कुंथु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत नमि पार्श्व) तीर्थंकर समेत शिखर पर्वत पर मोक्ष गए उनको वंदना किया, तथा महाविदेह क्षेत्र में विच-रते २० तीर्थंकरों को वंदन किया क्योंकि उत्कृष्ट से एक समय में २० तीर्थंकर पैदा होते हैं । ५) आठ और दस अठारह उसके साथ में बीस का चौथा भाग जो पांच होते हैं वह मिलावें तो तेवीस होवे हैं ये श्रीनेमि-श्वर तीर्थंकर के बीना २३ जिनेश्वरों का श्री शत्रुंजय पर्वत पर आगमन हुआ अतः उनका वंदन किया । (६) दस को आठ से गुणा करने से अस्सी होते हैं उनका दुगना करने से १६० तीर्थंकर उत्कृष्ट से महाविदेह में विहार करते हैं उनको वंदन किया । (७) चत्तारि-४ और अट्ठदश-१८ इस तरह अट्ठारह से गुणा करने पर ७२ तीर्थंकर भरतादि क्षेत्र के तीन काल की चोवीसी के होते हैं उनको वंदन किया । (८) चार में आठ जोड़ें तो बारह उनको दस गुणा करें तो १२० उनको दुगुणा करें तो २४० तीर्थंकर भरतादि दस क्षेत्र की दस चोवीसी के होते हैं उनको वंदन किया । (९) चत्तारी—४ आठ से आठ गुणा करने से ६४ होते हैं तथा दस को दस

परपरया – परपरा स
बीओ – दूसरे
दसमो – दसवें
इगारसमो – ग्यारवें
आवस्सय – आवश्यक का

अहिगारा – अधिकार
सुयमया – श्रुतमय
चव – निश्चय
बीओ – दूसरा

दव्वारिह–द्रव्यअरिहंत
(वंदन करने) के
अवसरि–अवसर होनेसे
पयडत्था–स्पष्ट अर्थ है

अर्थ

इन बारह अधिकारों में ६ अधिकार (१–३–४–५–६–७–८–६ और १२ वा) ललित विस्तरा भाष्य की टीका आदि के अनुसार हैं तीन अधिकार श्रुत की परंपरा से (गीतार्थ गुरु के सम्प्रदाय से) है। (दीनगा) दूसरा दसवे और ग्यारहवें अधिकार के सबंध में आवश्यक चुर्णि में कहा है कि बाकी के अधिकार इच्छा अनुसार समझ लेना। इस कारण से इच्छित आदि अधिकार भी श्रुतमय (सिद्धांतरूप) ही समझना चाहिये दूसरा अधिकार (जअाइआ) पुक्खरवर की आदि में अर्थ से वहाँ (आवश्यक चुर्णि में) वर्णन किया हुआ है (तब भी पूर्वाचार्यों ने) नमुत्थुणं के अंत में कहा है। (भाव अरिहंत को वंदन करने बाद) द्रव्य अरिहंत (वंदन का) का अवसर होने से उस का अर्थ स्पष्ट हैं।

किसके आचरण प्रमाण रूप समझना

असढाइन्नणवज्जं, गीअत्थ–अवारिअंतिमज्झत्था।
आयरण विहु आणत्ति वयणओ सुबहुमन्नंति ॥ ५९ ॥

असढाइ – पडिलो भी
अणवज्जं – पापरहित
गीअत्थ–गीतार्थों के द्वारा
अवारियंति– इनकार नहीं की हुई

मज्झत्था – मध्यस्थ
आयरण – आचरण
विहु– भी निश्चय प्रभु की
आणत्ति– आज्ञा है प्रभु अनुसार

वयणओ – वचन से
सुबहु– अत्यन्त बहुमान पूर्वक
मन्नन्ति – मानते हैं

नामजिण जिणनामा-ठवणजिणा पुणजिणिंद पडिमाओ ।
दव्वजिण जिणजीवा-भावजिणा समवसरणत्था ॥ ५१ ॥

नामजिण – नामजिन	पुण – पुन	दव्वजिणा–द्रव्यजिना
जिणनामा – जिनेश्वरों के नाम	जिणिंद– जिनेश्वरों की	जिणजिवा–जिनेश्वर के जीव
ठवणजिणा–स्थापनाजिना	पडिमाओ–प्रतिमा अथवा चरण (पगलिये)	भावजिण – भावजिन
		समवसरणत्था–समवसरण में बैठ हुए

अर्थ

जिनेश्वरों के नाम (ऋषभादिक) यह नाम जिन, जिनेश्वरों की (शाश्वती, अशाश्वती) प्रतिमा या चरण यह स्थापना जिन, भूतकाल में जो होगये, भविष्य में होनेवाले और अभी केवल ज्ञान नहीं प्राप्त कीया जिनने (अतित, अनागत और छद्मस्थ अवस्थावाले वर्तमान) ऐसे जिनेश्वरों के जीव यह द्रव्यजिन, समवसरण में बैठ हुए (केवल ज्ञान प्राप्त हुए) तीर्थंकर यह भावि जिन ।

चार स्तुतिका सोलहवा द्वार

अहिगय-जिण पढम थुइ बीया सव्वाण तइअनाणस्स ।
वेयावच्चगराण उवओगत्थ चउत्थ थुइ ॥ ५२ ॥

अहिगयजिण – अमुक जिनेश्वर की	सव्वाण – सर्व जिनकी	उ – तथा
पढमथुइ – प्रथम स्तुति	तइअ – तीसरी	उवओगत्थ– उपयोग के लिये
बीया – दूसरी	नाणस्स – ज्ञान की	
	वेयावच्चगराण – सेवा करनेवाले का	चउत्थथुइ–चौथी स्तुति

अर्थ

किसी भी (१ अथवा ५) जिनराज कि प्रथम स्तुति हैं । दूसरी स्तुति चाहीये सर्व जिनेश्वरों की है । तीसरी स्तुति ज्ञान (शास्त्र) की हैं

और उस के सेवा करनेवाले (सम्यग्दृष्टि देव-देवी) का उपयोग प्राप्त करने के लिये वैसा कहते हैं।

देववंदन के ८ निमित्त का १७ वा द्वार

पावक्खवणत्थ इरिआइ, वंदणवत्तिआइ छनिमित्ता।
पवयणसुर सरणत्थं उस्सग्गो इअनिमित्तट्ठ ॥ ५३ ॥

पावक्खवणत्थ–पाप क्षय करने के लिए	छनिमित्ता – छ निमित्त	सरणत्थं – स्मरण करने के लिये
इरिआइ – इरियावहियाए	पवयण – शासन के	उस्सग्गो – काउस्सग्ग
वंदणवत्तिआइ–वंदणवत्ति आदि	सुर – देव के (अधिष्ठायक के)	इअ – इस प्रकार
		निमित्तट्ठ–आठ निमित्त

अर्थ

पापों का क्षय करने के लिये इरियावहि करना यह प्रथम निमित्त, वंदणवत्तिआए आदि छ निमित्त, शासन के (अधिष्ठायक) देव का स्मरण करने के लिये काउस्सग्ग करना इस प्रकार आठ निमित्त हैं।

विवेचन

१ गमना गमन (आनेजाने की क्रिया) से जो पाप का बंधन हुआ उस बंधन को क्षय करने के लिये इरियावहि करना प्रथम निमित्त, २ प्रभु को वंदन करना दूसरा निमित्त ३ गंधादि से पूजन करना तीसरा निमित्त, ४ प्रभु का आभूषणादि से सत्कार करना चौथा निमित्त ५ प्रभुका स्तवनादि से गुणगान करना पाँचवाँ निमित्त ६ सम्यक्त्वका लाभ प्राप्त करना छठा निमित्त, ७ जन्ममरणादि उपसर्ग को क्षय (मोक्ष प्राप्ति) करना सातवाँ निमित्त, ८ शासन (सिद्धांत) के अधिष्ठायक देव का स्मरण करना इन आठ निमित्तों (कार्य) के लिये काउस्सग्ग करना।

देववंदन के १२ हेतु का १८ वा द्वार

चउतस्स उत्तरीकरण, पमुहसद्धाइ आयपण हेउ ।
वेयावच्चगरत्ताइ तिन्नि इअहेउबारसग ॥ ४४ ॥

चउ - चार	सद्धाइआ - श्रद्धादि	तिन्नि - तीन
तस्स - उसकी	पणहेउ - पांच हेतु	इअ - इस प्रकार
उत्तरीकरण-विशेष शुद्धि	वेयावच्चगरत्ताद— वेयावच्चगराण आदि	हेउ - हेतु
पमुह - आदि		बारसग - बारह

तस्सउत्तरीकरणेणं आदि ४ हेतु हैं, श्रद्धा आदि ५ हेतु हैं । औ वेयावच्चगराण आदि ३ हेतु हैं इस प्रकार का काउस्सग के १२ हेतु हैं।

विवेचन

१ उस पाप को शुद्ध करने के लिए २ आलोयण (आलोचना) व तप करने से, ३ आत्मा के राग द्वेष को क्षय करने रूप विशुद्धि करनेसे ४ मायाशल्य नियाण शल्य और मिथ्यात्वशल्य ऐसे तीन शल्य रहित करनेके हेतु से गमनागमन में जो पाप लगा वह क्षय होता है ५ श्रद्धा ६ निर्मल बुद्धि ७ धैय, ८ चित्त की स्थिरता ९ उसमें एकाग्रता इन पाच कारणोंसे प्रभु का वंदनादि ये ६ लाभक उस्सग्ग मे प्राप्त होते हैं १० वेयावच्च (सेवा) करने के लिए, ११ शान्ति करने के लिए, १२ सम्यग दृष्टि जीवोंको समाधि प्राप्त कराने के लिये इन तीन कार्यों के लिए सम्यग दृष्टिदेव का स्मरण करना चाहिये । यदि कार्य हो तो ५३ वी गाथा में कहा हुवा कार्य होता है ।

काउस्सग्ग के १६ आगार का १९ वां द्वार

अन्नत्थयाइबारस आगारा अेवमाइया चउरो ।
अगणीपणिंदि छिंदण बोही खोभाइ डक्को य ॥५५॥

अन्नत्थयाइ – अन्नत्थ आदि	आइया – आदि	बोहीखोभाइ–समकित का नाश आदि
बारस – बारह	चउरो – चार	
आगार–आगार (छूट)	अगणी – अग्नि	डक्को–सांप का काटना
अेव– य (आगे जो कहे जावें)	पणिंदिछिंदण– पांचिंद्रिय का छेदन	

अर्थ

अन्नत्थऊससीअणं आदि बारह आगार हैं । आगे कहे जाने वाले चार आगार हैं । १ अग्नि २ पंचेंद्रिया का छेदन भेदन, ३ समकितनाशादि, ४ सांप का काटना ।

विवेचन

आगार–काउस्सग्गादि में जो छूट रक्खी जावे । १ ऊँचा श्वास लेने से २ नीचा श्वास छोड़ने से, ३ खांसी आने से, ४ छींक आने से, ५ उबासी आने से, ६ डकार आने से, ७ अधोवात निकलने से, ८ चक्कर आने से, ९ पित्त का उछाला (वमन या उल्टी) होने से, १० सूक्ष्म अंग हिलने से, ११ सूक्ष्म थूक या कफ आदि आने से, १२ सूक्ष्म दृष्टि के हिलने से काउस्सग्ग का भंग नहीं होता है । १३ अग्नि का उपद्रव होने से [illegible] आदि का [illegible] [illegible]
[illegible]

या चोरादि के द्वारा धर्म का अविनय होता हो और १६ सर्पादि विषैले जीव काटने के लिए आते हों तो उनके भय को दूर करने के लिए दूसरे स्थान पर जाकर काउसग्ग करने से काउसग्ग का भग नही होता है।

काउस्सग्ग के १९ दोषों का २० वा द्वार

घोडगलयखभाइ मालुद्दी निअलसबरिखलिणवहू ।
लबुतरथणसजइ भमुह गुलियायसकविट्ठो ॥ ४६ ॥

घोडग – घोडा	निअल – बेडी	थण – स्तन
लय – लता (बेल)	सबरि – भीलनी	सजइ–साध्वी, सयति
खभाइ–खभा आदि दिवाल	खलिण – चोकड	भमुहगुलि–अगुली पर गिनना
माल – माल	वहु – वधु (बहू)	वायस – कौआ
उद्धि – गाडे की धुंसरी	ल्बुत्तर – चोलपट्टा	कविट्ठो – कोठ

अर्थ

१ घोटकदोष–घोडे की तरह एक पग ऊचा रक्खे २ लता–लता (बेल) की तरह शरीर हिलाना ३ स्तंभादि थांभे या दीवाल का सहारा लेना, ४ माल–छत पर सिर लगाना, ५ उद्धि–गाडी के दोनों आगे की लकडियों (जिस पर गाडी ठहराई जाती है) की तरह दोनों पैरों को शामिल करके काउसग्ग करना, ६ निगड–बेडी में गिरे हुए पैरों की तरह पैर अलग २ रखना, ७ शबरी–नंगी भिलनी की तरह गुप्त स्थान पर हाथ रखना, ८ खलिण–घोडे के चोकडा की तरह ओघा (रजोहरण रखना), ९ वधु–वधू की तरह नीचा सिर रखना, १० लनुत्तर–नाभि से चार अंगुल नीचे और घुटने से चार अगुल उचे चोलपट्टे के स्थान पर अधिक प्रमाण वाला रखना, ११ स्तन–डांसादि के डर से, अज्ञान से, या लज्जा से स्त्री के तरह हृदय को ढँकना, १२ संयति–

शीतादि के भय से साध्वी की तरह स्कन्ध ढंकना, १३ भमुहगुलि—अगुलियों के पैरवों पर गिनकर काउसग्ग करना, १४ वायस—कौआ की तरह आंखों की कीकी को इधर उधर फिराना, १५ कपित्थ—कविह की तरह वस्त्र मैले होने के भय से संकोच करके काउसग्ग करना।

सिरकंप मूअवारुणि पेहत्ति चेइज्ज दोसउस्सगे ।
लबुत्तरथणसंजइ, न दोससमणीण सवहु सड्ढीण ॥४७॥

सिरकंप – मस्तक कंप	दोस – दोष	नदोस–दोषनहीं लगताहै
मूअ – मूक (गूगा)	उस्सग्गे – काउसग्गमें	समणीण–साध्वियों को
वारुणि – मदिरा	लबुत्तर – लंबुत्तर	सबहु – बहु सहित
पेहत्ति – इस प्रकार	थण – स्तन	सड्ढीण–श्राविकाओंको
चइज्ज – त्याग करना	संजइ – संयति	

अर्थ

१६ सिरकंप–मस्तक धुनाना, १७ मूक–गूगों की तरह हुं हु करना १८ वारुणी–शराबी की तरह बोल बोल (बकवाद) करना, १६ पस्प-बदर की तरह इधर उधर देखना और इस प्रकार से १६ दोषों का साधु श्रावको को त्याग करना चाहिये। लंबुत्तर, स्तन और संयति ये तीन दोष साध्वियों को नहीं लगते हैं और वधू सहित चार दोष श्राविका को नहीं लगते हैं। (साध्वियों को सोलह दोष और श्राविका को १५ दोष लगते हैं) साध्वियों को प्रतिक्रमण की क्रिया नगा सिर रखकर करनी चाहिए (अभी इस समय यह प्रथा नही हैं)

२१ वां काउस्सग्गका प्रमाण और २२ वा स्तवन द्वार

इरिउस्सग्गा पमाण पणवीसुस्सास अट्ठसेसेसु ।
गंभीर महुर सद्द महत्थ जुत्त हवइथुत ॥ ४८ ॥

इरि–इरियावहिआए	अट्ठ – आठ	महत्थजुत–गूढ अर्थ युक्त
उसग्ग – काउसग्गका	सेसेसु–बाकी रहे हुए मे	हवइ – होता है
पमाण – प्रमाण	गंभीर–गंभीर	
पणवीस – पच्चीस	महुरसद–मधुर शब्दवाला	थुत्त – स्तवन
उस्सास–श्वासोश्वास		

अर्थ

इरियावहियाऐ के काउसग्ग का प्रमाण पचीस–श्वासोश्वास का, और बाकी (नवकार) के काउसग्ग का प्रमाण आठ श्वासोश्वस का (नाड़ी की धड़कन)। गंभीर, मधुर शब्द और गूढ अर्थयुक्त स्तवन होना चाहिये।

दिन और रात्रि में सात वक्त चैत्यवंदन करने का २३ वां द्वार

पडिक्कमणे चेइअ जिमण, चरिमपडिक्कमण सुअणपडिबोहे।
चिइवंदण इअजइणो, सत्तउवेला अहोरत्ते ॥ ५६ ॥

पडिक्कमणे–प्रतिक्रमण में	पडिक्कमण–प्रतिक्रमण में	इअ – इस तरह
चेइय – मंदिर मे	सुअण – सोनेके पहले	जइणो–यति (मुनि) को
जिमण–भोजन करने के प्रथम	पडिबोहे – जाग्रत होने पश्चात	सत्तउवेला – सात वक्त तथा
चरिम–भोजन के पश्चात	चिइवंदन – चैत्यवंदन	अहोरत्ते – रातदिन में

अर्थ

१ प्रातःकाल प्रतिक्रमण में (विशाल लोचन), २ मंदिर में, ३ भोजन के प्रथम, ४ भोजन के पश्चात, (इरियावहि से जयवियरायतक) ५ प्रतिक्रमण में (नमोत्थु०), ६ सोने के पहले (चउक्कसाय), ७ जाग्रत होने के पश्चात (जगचिंतामणि) इस प्रकार से मुनि को रातदिन में सात वक्त चैत्यवंदन करना चाहिये।

उत्कृष्ट मध्यम और जघन्य श्रावकको चैत्यवंदन

पडिक्कमओगिहिणोविहु सगवेला पचवेल इअरस्स ।
पूआसुति सज्झासुअ होइ तिवेला जहन्नेण ॥ ६० ॥

पडिक्कमओ – प्रतिक्रमण करते	सगवेला – सात वक्त	ति–सज्झासु–तीन संध्या के अंदर
गिहिणोवि – गृहस्थको भी	पचवेल – पांच वक्त	होइ – होते हैं
हु – अवश्य	इअरस्स – दूसरों को	तिवेला – तीन वक्त
	पूआसु – पूजा में	जहन्नेण – जघन्य से

अर्थ

दोनों समय प्रतिक्रमण करनेवाले गृहस्थ को भी अवश्य सात वक्त चैत्य वंदन होना है । और एक वक्त प्रतिक्रमण करनेवाले को पांच वक्त होना है । दूसरों को (प्रात:काल वासक्षेप पूजा । दोपहर में अग पूजा और शाम को धूप) इस प्रकार तीन पूजाओं के द्वारा जघन्य से तीन वक्त चैत्यवंदन होना है ।

जिनालय (मंदिर) की १० बड़ी अशातना का २४ वा द्वार

तंबोल पाणभोयण वाणह मेहुन्नसुअण निट्ठवण ।
मुत्तुच्चार जुअं वज्जे जिण नाह जगइअे ॥ ६१ ॥

तंबोल–तंबाल (पान)	मेहुन्न – मैथुन	उच्चारं – बड़ी नीति
पाण – पानी	सुअण–शयन (सोना)	जुअं – जुआ
भोयण – भोजन	निट्ठवण – थुकना	वज्जे – त्याग करना
वाणह–उपानह (पगरखी)	मुत्त – मूत्र	जिणनाह – जिनेश्वर
		जगइअे –

अर्थ

१ तवोल (पान सुपारी खाना) २ पानी पीना, ३ भोजन करना, ४ पगरखी (जुते) पहिनना, ५ मैथुन सेवन करना, ६ शयन (सोना), ७ थुकना, ८ मूत्र करना, ६ बड़ी नीति (दस्त) करना, १० जुआँ खेलना, इन दस आशातनाओं का भगवान के मंदिर में त्याग करना चाहिये।

श्रीजिनमंदिर में त्याग करने योग्य ८४ आशातन

विवेचना = आशातना (आय+शातना) ऐसे कार्य जिनसे ज्ञान दर्शन और चरित्र का नाश होता हो। १ पान सुपारी खाना, २ पानी पीना ३ भोजन करना ४ पगरखी (जूते) पहिनकर अन्दर जाना, ५ मैथुन सेवन करना, ६ बिछौने करके सोना ७ थूकना या कफ डालना, ८ पेशाब करना, ६ दस्त करना, १० जुआँ खेलना ११ अनेक प्रकार की क्रीडा करना (सुजलाना आदि), १२ कोलाहल (चिल्लाना) करना, १३ धनुर्वादादि कला का अभ्यास करना, १४ कुल्ला करना, १५ किसीको गाली (अपशब्द) बोलना, १६ शरीर का धोना १७ बाल उतारना १८ खून डालना, १६ मिठाई आदि डालना, २० चमड़ी उतारना, २१ पित्त निकालना, २० उलटी करना, २३ दांत निकालकर डालना, २४ विश्राम लेना, २५ गाय भैंस आदि बांधना, २६ दांत का मेल डालना, २७ आंख का मेल डालना, २८ नख का मेल डालना, ६ गाल का मेल डालना, ३० नाक का मेल डालना, ३१ सिर का मेल डालना, ३२ कान का मेल डालना, ३३ चमड़ी का मेल डालना, ३४ मन्त्रादि का प्रयोग करना, ३५ विवाह के लिये एकत्र होना, ३६ कागज लिखना, ३७ अमानत रखना, ३८ हिस्सा करना, ३६ पग पर पग चढ़ाकर बैठना ४० छाने थापना ४१ कपड़े सुकाना, ४२ धान्य सुकाना ४३ पापड़ सुकाना, ४४ बड़ी करना, ४५ छीपना, ४६ रोना, ४७ विकथा करना, ४८शस्त्रास्त्र बनाना, ४६ तिर्यंच (गाय भैंस आदि) रखना, ५० तापणा करना, ५१ रसोई करना, ५२ सोना आदि की परीक्षा

करना, ५३ निसीहि नहीं करना, ५४ छत्र धारणकरना ५५ शस्त्र रखना ५६ चामर वींजाना, ५७ मन एकाग्र न करना, ५८ मालिश करना, ५९ सचित्त का त्याग नहीं करना ६० अचित (वस्त्राभरण) का त्याग करना, ६१ बालकों को खेलाना ६२ एक साडी उत्तरासन नहीं करना, ६३ मुकुट रखना ६४ तुरा रखना, ६५ पगडी का अविवेक करना, ६६ शर्त लगानी ६७ गेंद डंडे से खेलना ६८ जुहार करना, ६९ भांड चेष्टा करना ७० तिरष्कार करना, ७१ लंघन करके बैठना, ७२ संग्राम करना ७३ केश का विस्तार करना ७४ पग बांधकर बैठना, ७५ चाखडियो पहरना ७६ पग लंबा करना, ७७ पीपुडी बजाना ७८ कीचड डालना ७९ अंग की धुल उडाना ८० गुह्य भाग प्रगट करना ८१ व्योपार करना ८२ वैद्यगीरी करना ८३ स्नान करना ८४ नख उतारना।

मध्यमचैत्य वंदन

इरिनमुक्कार नमुत्थुण अरिहंत थुइलोगसव्वथुइपुक्ख।
थुइसिद्धावेआथुइ नमुत्थु जावतिथय जयवी ॥ ६२ ॥

इरि – इरियावहि	लोग – लोगस्स	वेआ – वेयावच्चगराणं
नमुक्कार – चैत्यवंदन	सव्व – सव्वलोए	थुइ – स्तुति
नमुत्थुण – नमुत्थुण	थुइ – स्तुति	नमुत्थु – नमुत्थुण
	पुक्ख – पुक्खरवरदि	जावति – जावंति
अरिहंत–अरिहंतचेइआणं	थुइ – स्तुति	थय – स्तवन
थुइ – स्तुति	सिद्धा – सिद्धाणं	जयवी – जयवीराय

अर्थ

इरियावहिआए (खमासमण से लोगस्सतक) चैत्यवंदन, नमुत्थुणं, अरिहंतचेइआणं, पहेली स्तुति, लोगस्स सव्वलोए दुसरी स्तुति,

वड्डे-तीसरी स्तुति, सिद्धाण-बुद्धाण, वेयावच्चगराण, चौथी स्तुति, नमुत्थुण जावंति, जावंतकेवि नमो० स्तवन, और जयवीयराय।

देववंदन का फल

सव्वोवाहि विसुद्ध एवंजो वंदए सया देवे।
देविंद विंद महिअं परमपय पावइ लहु सो ॥ ६३ ॥

सव्वोवाहि-सर्व उपाधीसे	सया – हमेशा	परमपय – परमपद को
विसुद्ध – शुद्ध रीते	देव – जिनेश्वरों को	(मोक्ष को)
एवं – इस प्रकार	देविंद-देव के इन्द्रों का (देवेंद्र सूरि)	पावइ – प्राप्त होता हैं
जो – जो	विंद – समूह से	लहु – शीघ्र
वंदए – वंदन करे	महिअ – पूजा हुवा	सो – वह

अर्थ

सर्व उपाधि (धर्मचिंता) और विशुद्धरीति से जो मनुष्य हमेशा जिनेश्वर को वंदन करता है वह देवेंद्रों के समूह (देवेंद्रसूरि) से पूजित शीघ्र मोक्ष गति को प्राप्त होता है।

विवेचन

कोई जीवभाष्य में कही हुई विधि को नही जानता हो तो भी ये आठ भावनाएं जिस में पाइ जाती हों उसे सर्वोपाधि विशुद्ध अर्थात सर्व श्री जिन धर्म की चिंता से विशुद्ध भक्तिवंत कहते हैं। १ भक्ति (बाह्यसेवा), २ बहुमान (हृदय में प्रेम), ३ वर्णवाद (धर्म के यश का वर्णन करना), ४ आशातनाका त्याग, ५ धर्म के निंदक की संगति का त्याग, ६ शक्ती होते हुए

पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध
६	ज्ञान अराधन	ज्ञान आराधन
८	छउम 4त्थ	छउमत्थ
८	०	थ य–वत्थ
६	मुद्दामेअण	मुद्दामेभेण
११	अल ति	अलग्गति
१२	सहित व	सहित
१२	०	व
१२	व	और
१२	जावतिचेइ आइ	जावतिचेइआइ
१२	कांग्ने	कांग्रने
१३	जावतिचे इआई	जावंतिचइआई
१३	मुज्भगो	मुज्माण
१३	मचितमुगुज्अण	मचितमणुज्मण
१३	•	म
१३	अपचमअे	पचमअे
१३	उज्अण	उज्माण
१३	अणुज्अण	अणुज्मण
१३	पांचवा	पांचवां
१४	पुरिसवायदि मिनारी	पुरिसवायदिजिनारी
१४	मज्अग्ग	मज्झग्ग
१४	खडेरहक	खडेरहकर
१४	सक्स्तय अेण	सक्कत्थअेण
१४	मज्आ	मज्मा
१४	दंडपुइजुआला	दडपुइजुअला
१२	नमुत्यण	नमुत्थुण
१६	नमुत्याण	नमुत्थुण

पृष्ठ अशुद्ध	शुद्ध
१७ अटुम्त	अदुरन
१६ अरिहंतचइआए	अरिहंतचेइआण
२० बहुउतक	वहुउतक
२० अन्साठ	अन्सठ
२० हुतीममय	हुतीसपत्र
२१ कारणे	कारेण
२१ अरहे उसगहे	अरहेउसगहे
२१ इअरदेउ	इअरहेउ
२२ सपायाइगया	सपायाइगया
२३ थोग्रव	थोअव्व
२३ सद्ददरय	सद्दाय
२४ नउ-आवला	नउआवला
२२ लेवपाइअहिं	अंवमाइअहिं
२६ पयमय	पयमम
२६ पयसय	पयसम
२६ उचरए	उचारए
७ क्रमए	कमेण
२८ देवेदन	देववदन
३० पद	+
३२ यीअजे उदव्व	यीयजेउदव्व
३३ उद वजिगे	दव्वजिणे
३४ त्तित्तिआइयगुमारा	तितिमाइयगुमारा
३६ अतिमनथा	अतिमकथा
३६ गिद्ध	विद्ध
३६ वदएवत्तिआदि	वदएवतियादि
४१ निकासने से	निकसने से

पृष्ठ अशुद्ध	शुद्ध
४२ भमुह गुलि	भमुहगली
४२ शवरी	सवरी
४२ (रजोहरण रयना)	(रजोहरण)
४४ मध्यय	मध्यम
४४ मेहुधा	मेहुक्ष
४४ उवाणट	उवाणह
४६ होता हो	होता हो
४८ विंद	विंद
४८ लहु	लट्ठ

श्री ज्ञान [illegible] पुष्पमाला का

प्रथम-पुष्प

श्रीमद् देवेन्द्रसूरिजी महाराजकृत

श्री चैत्य वंदन भाष्य

का

हिन्दी अनुवाद

कर्ता

श्री प्रतापमलजी सेठिया मन्दसौर

प्रकाशक

जैन-सेवा-संघ मन्दसौर (मध्यभारत)

वीर सं २४८१ विक्रम सं २०१२

मूल्य—सदवाचन